अलम और अलमदारी

सफ़वतुल उलमा मौलाना सै० कल्बे आबिद ताबा सराह

वतन, क़ौम, मज़हब और दीगर बलन्द मक़ासिद के लिए बा–अज़्म इन्सान हर दौर में कुर्बानियाँ देते रहते हैं। नौए इन्सानी के इब्तेदाई दौर में जनाब हाबील की कुर्बानी इतनी बाअज़मत थी कि कुरआन ने तज़किरा किया। जनाब इब्राहीम का अपने महबूब फ़रज़न्द के गले पर छुरी रख देना अल्लाह की ख़ुशनूदी के लिए अज़ीज़ तरीन चीज़ निसार करने के लिए बलन्द मिसाल थी कि इसकी यादगार मनाना क़यामत तक के लिए मुसलमानों का शेआर दे दिया गया। जनाब यहया की कुर्बानी भी मामूली कुर्बानी न थी। हमारे हिन्दुस्तान में भी एक बेटे के बाप के अहद को निबाहने के लिए दश्त नवरदी पर आमादा होना और एक भाई और बीवी की वफ़ादारी की याद सैकड़ों साल से मनाई जाती है। कहने को वाक़िअ–ए–कर्बला भी एक कुर्बानी की यादगार है जो बक़ाए इस्लाम के लिए पेश की गई। लेकिन हक़ीक़त ये है कि इस कुर्बानी का तक़ाबुल किसी बड़ी से बड़े कुर्बानी से मुमकिन नहीं। ये मुख़्तलिफ़ जेहात और हैसियतों से ऐसी अनोखी और निराली है कि कोई दूसरी कुर्बानी इसके हम पल्ला क़रार नहीं पा सकती।

शायर ने कहा है:

यक हुसैने नीस्त कू गरदद शहीद
वरना बिसयार अन्द दर दुनिया यज़ीद

यज़ीद से ज़ालिम दुनिया में और भी हो सकते हैं। मगर हुसैन के से ज़ुल्म बर्दाश्त करने वाले, और मक़सद पर डटे रहने वाले न थे न हैं और न आइन्दा हो सकते हैं। लेकिन मुझे "यक हुसैने नीस्त" के जुमले से इत्तेफ़ाक़ नहीं। क्योंकि इसका मतलब ये है कि बस एक हुसैन[अ०] का सा कोई दूसरा मौजूद नहीं। लेकिन मैं कहता हूँ कि दुनिया ने अली अकबर का सा बेटा, अब्बास का सा भाई, क़ासिम का सा भतीजा, औनो मुहम्मद के से भाँजे, ज़ैनब व उम्मे कुल्सूम की सी बहनें और असहाबे बावफ़ा के से सहाबी कब देखे। जब इमाम हुसैन ने इरशाद फ़रमाया कि इनके से सहाबी न रसूल के थे न अली के थे और न हसन के थे। हालांकि इस फेहरिस्त में सलमान, मिक़दाद, अबूज़र, अम्मारे यासिर, मालिके अश्तर, उमर बिन हुमुक़ ख़ज़ाओी, रशीद हजरी के नाम मिलते हैं। तो फिर कहीं और कहाँ मिल सकते हैं। जनाब ईसा की पूरी ज़िन्दगी का निचोड़ वह बारह हवारी थे जिन्होंने नबी की आवाज़ *"कौन है जो अल्लाह की तरफ़ बढ़ने में मेरी नुसरत करे"* पर बड़े ज़ोर व दावे से ये एलान किया था: *"हम हैं ख़ुदा के मददगार (उसके मक़सद में मुईन) हम अल्लाह पर ईमान लाए हैं और ऐ ईसा गवाह रहिये कि हम मुसलमान हैं"* उन में से ग्यारह साबित क़दम रहे लेकिन एक डगमगा गया और न सिर्फ़ ये कि जनाब ईसा को छोड़ दिया बल्कि दुश्मन का मुख़बिर बन गया। रिसालतमाब[अ०] के साथियों ने जंगे ओहद, ख़ैबर और हुनैन वग़ैरा में क्या किया? किसको नहीं मालूम। हज़रत अली[अ०] के साथियों ने नेज़ों पर कुरआन देखकर कुरआने नातिक़ से क्योंकर निगाहें फेरीं ये तारीख़ का एक दर्दनाक वाक़िआ है इमाम हसन[अ०] को अपने साथियों पर एतेमाद होता तो मुआविया से सुलह क्यों फ़रमाते? इस में कोई शक नहीं कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ख़ुद बड़ी बहादरी से लड़े मगर ग़ैरों का क्या ज़िक्र बेटे और भाई तक रंग बदलते देखकर दुश्मन से मिल गए। मगर क्या कहना हुसैन[अ०] के अज़ीज़ों, दोस्तों और अन्सार का जिन्होंने महज़रे शहादत पर वफ़ा की मोहरें सब्त कर दीं। वाक़िअ–ए–कर्बला के मुनफ़रिद होने की एक हैसियत

ये भी है कि ये वफ़ाओं का कोई अकेला फूल नहीं गुलदस्ता है। बल्कि गुलदस्ता क्यों कहूँ, एक शादाब गुलिस्ताँ और सदाबहार चमन है इस फ़र्क़ के साथ गुलज़ारे हुसैनी के फूल जितने मुरझा गए उतनी ही उनकी शमीम फैलती गई। और जितना ख़िज़ाओं ने मिटाना चाहा उतनी ही बहार पर निखार आता गया। ये फ़रज़न्दे आदम जनाब हाबील की कुर्बानी की तरफ़ एक फ़र्द के सिबातो इस्तेक़लाल का वाक़िआ नहीं। ये जनाब इब्राहीम व इस्माईल के क़िस्से की तरह सिर्फ़ एक बाप और बेटे के ख़ुदा की मर्ज़ी के सामने सर झुका देने का तज़किरा नहीं। ये जनाब यहया के मिस्ल ज़ालिम व जाबिर बादशाह के सामने सर न झुकाने की मिसाल भी नहीं। ये ईसा के हवारिय्यीन की तरह सिर्फ़ चन्द दोस्तों की साबित क़दमी का ज़िक्र भी नहीं। ये हिन्दुस्तान के मशहूर वाक़िए की तरह सिर्फ़ एक भाई और ज़ौजा की वफ़ादारी की दास्तान भी नहीं। कर्बला में गुज़िश्ता तमाम कुर्बानियों का जलवा जिनकी यादगार सैंकड़ों बरस से मनाई जाती है बेहतर अन्दाज़ से मिलने के अलावा ऐसी मिसालें भी मिलती हैं जो न पहले नज़र आ सकीं और ना आइन्दा नज़र आएंगी। वाक़िअ—ए—कर्बला और गुज़िश्ता वाक़िआत की मिसाल वैसी ही है जैसे क़ुरआन मजीद और गुज़िश्ता अम्बिया के सहीफ़े, क़ुरआन में वह सब सिमट आया जो गुज़श्ता सहीफ़ों में है और इन सहीफ़ों में बहुत से वह हक़ाएक़ नहीं जो क़ुरआन में पाए जाते हैं। इस कुर्बानी में शिरकत करने वाले एक नहीं कई भाई हैं, बेटे हैं, भाँजे हैं, भतीजे हैं, दूर और क़रीब के अज़ीज़ हैं, आज़ाद हैं, ग़ुलाम हैं, मर्द हैं, औरतें हैं। औरतों में भी बहने हैं, भतीजियाँ हैं, बेटियाँ हैं, बीवियाँ हैं। जाँनिसारों के अहलोअयाल हैं। इनमें कुछ बूढ़े हैं, कुछ कमसिन हैं, कुछ जवान हैं। इतने इख़्तेलाफ़ात के बावजूद जिसको भी कुर्बानी के आइने में देखा सब एक शान के नज़र आए। क्या ख़ूब कहा है आले रज़ा मरहूम ने:—

अपने—अपने सिन्फ़ो सिन के कैसे नुमाइन्दे निकले
करबो बला के तपते बन में छाँट के जिनको लाए हुसैन[अ०]

देखने की बात है कि जिस चमन के हर फूल से बुए वफ़ा आती हो, जिस फ़लके शहादत के हर सितारे से बुए वफ़ा आती हो, जिस फ़लके शहादत के हर सितारे में ईसार की चमक हो, जिनमें का हर एक शुजाअत व बिसातत का आफ़ताबो माहताब हो। जिस लश्कर का हर सिपाही फ़रमाँबरदारी व इताअत शेआरी का पैकर हो फिर उस वफ़ाशेआर का क्या आलम होगा जो इस गुलिस्ताँ का गुले सर सबद जो इन सितारों में चाँद, जो माहताबों में आफ़ताब और जो उस लश्कर का अलमदार हो जिसको दो मासूमों की निगाहे इस्मत ने चुना जिसको अली[अ०] के से बाप ने अपनी नयाबत और हुसैन[अ०] के से भाई ने अपने रायत के लिए मुन्तख़ब किया हो। मानी हुई बात है कि लश्कर में अलम को मरकज़ी हैसियत हासिल होती है। मरकज़ के टूट जाने से अजज़ा मुन्तशिर हो जाते हैं। इसी लिए अलमदारी का इन्तेख़ाब बहुत सोच समझ कर किया जाता है। जंगे ओहद में जब मुसलमानों के क़दम उखड़ गए थे लश्करे इस्लाम को फ़रार करते देखकर कुफ़्फ़ार के हौसले बलन्द हो गए थे उस महल पर अमीरुलमोमिनीन अली बिन अबी तालिब[अ०] ने मौक़े की नज़ाकत देखकर ये तरीक़—ए—जंग इख़्तियार किया कि जिसने भी कुफ़्फ़ार का अलम उठाया, अलमदारे लश्करे इस्लाम ने उसको बढ़कर क़त्ल कर दिया। बारहा अपना झण्ठा नीचे होते देखकर कुफ़्फ़ार के दिल छूट गए हिम्मत टूट गई। काफ़िरों को भी इसका एहसास हो गया। लेकिन ये भी समझ गए कि आज अली[अ०] किसी भी अलमदार को ज़िन्दा न छोड़ेंगे तो उन्होंने अलम की मरकज़ियत को क़ायम रखने के लिए झण्डा एक औरत के हाथ में दे दिया। क्योंकि जानते थे कि अली[अ०] की मर्दानगी ये गवारा न करेगी कि औरत पर हाथ उठाएं। रिसालतमआब[स०] ने इस ओहदे को इतना अहम क़रार दिया कि जिस मारके में अली[अ०] मौजूद रहे उसी कर्रार ग़ैरे फ़रार को अलमदार बनाया जंगे मौता में आपकी निगाहे इन्तेख़ाब ने जनाब अब्दुल्लाह इब्ने रवाहा, जनाब ज़ैद और जनाब जाफ़रे तैयार को अलमदारी के लिए चुना। इनमें से हर एक ने हक़ अदा कर दिया। जंगे जमल में बजाए अलम के मरकज़ियत उस जमल को हासिल हो गई थी जिस पर उम्मुलमोमिनीन सवार थीं। गोया पूरे लश्कर का अलम

यही ऊँट बना हुआ था बसरे वाले जानें देकर उसकी हिफ़ाज़त कर रहे थे। जमल के क़रीब कटे हाथों के ढेर लग गए थे। अमीरुलमोमिनीन ने फ़ैसला फ़रमाया कि बेशक ये जमल अपनी जगह क़ायम रहेगा ख़ूँरेज़ी होती रहेगी। लेहाज़ा हुक्म दिया कि उसको पै कर दिया जाए चुनानचे ये मरकज़े फ़साद चीख़ मार कर गिरा। बसरे वालों के दिल टूट गए और पैर उखड़ गए। ज़ाहिर है कि कर्बला की जंग हक़ व बातिल का एक ऐसा बेमिस्ल मारका था जिसमें इस्लामी उसूल और अख़लाक़ और किरदार के वो नमूने पेश होना थे जो क़यामत तक के लिए मिशअले राह बन जाएं। इसका अलमदार ऐसा होना चाहिए था जो सदाक़त व दयानत, वफ़ादारी व इताअत, शुजाअत व बसातत, ईमान व इस्तेहकाम, अल्लाह पर यक़ीन व एतेमाद ग़रज़ इस्लामी किरदार का बेमिसाल नमूना और हुसैन[अ०] के मक़सदे शहादत का आइना हो और ये शख़्सियत थी जनाब अब्बास बिन अली बिन अबी तालिब की। जिनकी तारीफ़ में इमाम जाफ़र सादिक़ की मासूम ज़बान यूँ रत्बुललिसान है... .. ख़ुदा! रहमत नाज़िल कर हमारे चचा अब्बास पर जो तेरे दीनदार और मुस्तहकम ईमान वाले थे उन्होंने इमाम हुसैन[अ०] के साथ जंग की और कारहाए नुमायाँ अन्जाम दिये। आख़िर दरज–ए–शहादत पर फ़ायज़ हुए ख़ुदा ने उनके कटे हुए बाज़ुओं के एवज़ दो पर अता फ़रमाए। ये किसी शायर का क़सीदा नहीं मासूम की ज़बान के अलफ़ाज़ हैं जिससे अदा होने वाला हर लफ़्ज़ मुबालग़ा से दूर और हक़ीक़त का आइना होता है। भाईयों की वफ़ादारी की मिसालें तो बहुत मिलती हैं यह वह रिश्ता है जिसको ईमानी मुहब्बत के इज़हार के लिए क़ुरआन मजीद ने मुन्तख़ब फ़रमाकर इरशाद किया:

"मोमिन एक दूसरे के भाई हैं।" दूसरी आयत में इरशाद है: "अपने ऊपर अल्लाह के ये नेमत याद करो, जबकि तुम में दुश्मनी थी अल्लाह ने दिलों में उलफ़त पैदा की और अल्लाह की नेमत के तुफ़ैल में तुम भाई–भाई बन गए।" रिसालतमआब[स०] ने भी जब मुसलमानों के इत्तेहाद को मज़बूत करना चाहा तो रिश्त–ए–उख़ुव्वत क़ायम फ़रमाया। और अपनी और अली[अ०] की मुहब्बत दुनिया पर यूँ ज़ाहिर फ़रमाई कि

अली[अ०] की मुहब्बत दुनिया पर यूँ ज़ाहिर फ़रमाई कि हर मरतबा अली[अ०] को अपना भाई मुन्तख़ब किया। लेकिन जहाँ तारीख़ के औराक़ में भाईयों की फ़िदाकारियाँ मिलीं वहीं सौतेले भाईयों में अदावतें और दुश्मनियाँ भी नज़र आईं। मालूम नहीं कितने ऐसे भाईयों के हाथ ख़ून में रंगे नज़र आए और कितने ऐसे थे जिन्होंने सूलियाँ दिलवा दीं और आँखें निकलवा लीं। शक़ावत की ऐसी मिसाल भी मिली कि भाई का कटा हुआ सर कमज़ोर बाप के पास तोहफ़े में भेजा गया। क़ुरआने मजीद ने जनाब यूसुफ़ का ज़िक्र किया है, उस अल्लाह के प्यारे बन्दे को गुलामी की ज़िन्दगी बसर करना पड़ी। मुद्दतों क़ैद में रहना पड़ा, फ़िराक़े पिदर बर्दाश्त करना पड़ा, बाप को इतना सद्मा पहुँचा कि आँखों की रौशनी चली गई। किसके हाथों सौतेले भाई ही तो थे जिन्हें यूसुफ़ के से हसीन व जमील ख़ुश अख़लाक़ व बलन्द किरदार को कुँए में डालते रहम न आया।

उन्होंने तो मामूली रक़म पर गुलाम बनाकर बेच डाला। सौतेली माओं के दिल का बुग़्ज़ो अदावत परवरिश के असर से औलाद में मुन्तक़िल हो जाया करता है। रसूल[स०] की आँख बन्द होने के बाद पैदा होने वाले फ़ित्नों की जड़ बहुत कुछ यही सौतापा था। मगर एक तरफ़ ये हज़ारों सौतेली माँओं और भाईयों के अदावत की मिसालें हैं तो दूसरी तरफ़ जनाब उम्मुल बनीन और उनके साहबज़ादों जनाब अब्बास और उनके भाईयों की मुहब्बत जाँनिसारी और फ़दाकारी की तसवीरें आइन–ए–कर्बला में नज़र आती हैं। मुझे नहीं मालूम कि ख़ास तौर पर हज़रत इमाम हुसैन से अलग हो जाने की किसी को इस तरह दावत दी गई हो। जैसी जनाब अब्बास[अ०] को रिश्तेदारी का हवाला देकर शिम्र ज़िल जौशन ने दी थी। न सिर्फ़ ये कि अमान मिल रही थी बल्कि शिम्र के असरात से बड़े से बड़ा ओहदा मिलने की भी उम्मीद थी। मगर जनाब अब्बास और उनके भाईयों ने इस दावत को ठुकराया और वफ़ादारियों का मुज़ाहेरा करके सौतेले भाईयों की लाज रख ली। जिस वक़्त हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने शबे आशूर अपना बेनज़ीर ख़ुतबा इरशाद फ़रमाया और शाह कम सिपाह ने अपने मुख़्तसर से लश्कर

को भी ख़ुशी से साथ छोड़ने की इजाज़त दे दी।

और जब ये देखा कि साथियों में कोई जाने के लिए नहीं उठा तो हिम्मत बढ़ाने के लिए भी कह दिया कि तुम लोग अपने साथ मेरे एक—एक अज़ीज़ को भी लेते जाओ। जब इस मंज़िल पर इमाम हुसैन[अ०] का ख़ुतबा पहुँचा तो जनाब अब्बास ही थे जो सबसे पहले उठे थे और फ़रमाया था कि आक़ा ये हरगिज़—हरगिज़ नहीं हो सकता कि हम आपका साथ छोड़ दें आप शहीद कर दिये जाएं और हम ज़िन्दा रहें। जनाब अब्बास के इस हौसलामन्दाना जवाब के बाद दूसरे वफ़ादारों ने अपनी जाँनिसारी का इज़हार किया। ऐसा सोचा भी नहीं जा सकता कि जनाब अब्बास से पहले मआज़ल्लाह दूसरे साथी मुज़बज़ब थे। और हज़रत अब्बास की तक़रीर से उनमें जोश व हिम्मत पैदा हुई। नहीं हरगिज़ नहीं बल्कि जनाब अब्बास की वफ़ादारी व जाँनिसारी की हैबत उनके दिलों पर ऐसी थी कि किसी को हिम्मत न हुई कि उनसे पहले उठने की जुरअत करता। सब मुन्तज़िर थे कि पहले जनाब अब्बास जवाब दे लें तब हम अपने दिल की बात कहें। यही वह जनाब अब्बास की वफ़ादारियाँ थीं कि उनकी शहादत पर इमाम को इरशाद फ़रमाना पड़ा:

''अब मेरी कमर टूट गई और राहे चार ओ तदबीर बाक़ी न रही'' और इसी की बिना पर इमाम हुसैन[अ०] की तरफ़ मन्सूब शेर में जनाब अब्बास को कर्बला के शहीदों में अफ़ज़लुश्शोहदा का लक़ब दिया गया। और यही अज़मते किरदारे जनाब अब्बास है जिसकी बिना पर अबूहमज़ा सुमाली की इमाम जाफ़र सादिक़ से रिवायत करदा ज़ियारत में मदहो सना के फूल निछावर किये गए हैं।

ज़ियारत में जनाब अब्बास[अ०] की अज़मते किरदार, बलन्दि—ए—ईमान और आपके ख़ुलूसे अमल पर रौशनी पड़ती है। ज़बाने मासूम से हज़रत अब्बास की मद्‌होसना में अदा होने वाला उनका हर जुमला ताजदारे वफ़ा के ख़ुलूस की कलग़ी के लिए ऐसा गौहरे आबदार है जिसका जवाब मुमकिन नहीं। हर हर जुमला ऐसा है कि उसकी तशरीह के लिए पूरा मज़मून चाहिए।

बक़िया... शहादत है, मतलूब व मक़सूदे मोमिन

फिर लाशे अली असग़र लाकर ख़ेमे में मादरे अली असग़र हज़रत रुबाब से फ़रमाया तुम अपने बच्चे को ले लो! अब ये तुम से पानी कभी तलब नहीं करेगा। और फिर वह वक़्त भी आ गया जब इमाम आली मक़ाम का सरे अक़दस नेज़े पर बलन्द था और यज़ीदी फ़ौज फ़तह के बाजे बजा रही थी। आज आशूरे मुहर्रम है 61[हि०] में यही तो दिन था जब हुसैन[अ०] और अस्हाबे हुसैन के मुक़द्दस लाशे सहराए कर्बला में बेगोरो कफ़न पड़े थे। ख़यामे आले रसूल में आग लगी हुई थी। यज़ीद अपनी फ़तह पर नाज़ाँ था मगर आने वाली तारीख़ उसे झुठला रही थी कि तू हरगिज़ फ़ातेह नहीं है! फ़ातेह तो वह हुसैन[अ०] हैं जिन्होंने शहीद होकर हक़ व सदाक़त और इस्लाम की लाज रख ली और सच्चाई का अलम क़यामत तक के लिए बलन्द कर दिया, यज़ीदी आमिरियत के जनाज़े को रुसवाई के गहरे ग़ार में दफ़न कर दिया और औलादे आदम के ज़मीर को वह रौशनी दे दी जिसे लाखों यज़ीद मिलकर भी अब कभी नहीं बुझा सकते और अपने ख़ून से इन्सानियत के शऊर की तख़्ती पर तहरीर कर गए कि सच्चे मोमिन का मतलूब व मक़सूद माद्दी सलतनत व इक़्तेदार नहीं होता बल्कि हमेशा उसका मतलूब व मक़सूद राहे ख़ुदा में कुर्बानी और शहादत की ला ज़वाल इज़्ज़त का हासिल करना होता है।